Knowledgeable Research (KR) 2026, Vol., (5):02
ISSN: 2583-6633, CODEN: KRABAU
International open-access peer-reviewed refereed monthly journal
https://knowledgeableresearch.com/index.php/1

प्रगतिवाद:शोषण के विरुद्ध एक समग्र क्रांति

सुजीत कुमार वर्मा *
सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, स्वामी शुकदेवानंद कॉलेज, शाहजहाँपुर , उत्तर प्रदेश

Abstract

प्रगतिवाद हिंदी साहित्य की उस काव्यधारा का नाम है ,जो मार्क्सवादी दर्शन के आलोक में सामाजिक चेतना व भावबोध को अपना लक्ष्य मानकर चली। प्रगतिवाद एक तरह से पूँजीवादी/सामन्तवादी व्यवस्था का विरोध है। जिसका नेतृत्व मार्क्सवादी /समाजवादी विचारधारा कर रही थी । जो विषम संकट और संघर्ष से गुजरे जनजीवन को बल दे रहा था । जो सामंतवादी और पूँजीवादी विभीषिकाओं को कुचलकर सर्वहारा का अधिनायकत्व करना चाहता था। इसी संघर्ष का परिणाम प्रगतिवाद है । जिसमें कवि सामाजिक, आर्थिक,राजनीतिक, शोषणवादी विषमता पर व्यंग्य कसता है,साथ में किसानों, मजदूरों , भिखारियों, विधवाओं, वेश्याओं का जैसा सजीव चित्रण प्रगतिवाद में मिलता है वह कहीं अन्यत्र दुर्लभ है। नारी के प्रति प्रगतिवादियों का दृष्टिकोण नारी को पुरुष दासता की लौहमयी श्रृंखलाओं से मुक्त कर स्वाधीनता की अधिकारिणी मानता हुआ कहता है - मुक्त करो नारी को ,मानव!

प्रगतिवादी कविता सामाजिक यथार्थ परख है, जिसमें शोषक वर्ग, व्यापारी ,जमीदार ,उद्योगपतियों की सड़ी - गली विसंगति ग्रस्त शक्तियों का पर्दाफाश किया गया है। प्रगतिवादी कवि रूढ़ियों का विरोध करता हैं। ईश्वर की सत्ता में विश्वास नहीं करता, आत्मा, परलोक, भाग्यवाद,धर्म, स्वर्ग, नरक आदि पर विश्वास नहीं करता। उनकी दृष्टि में मानव की महत्ता सर्वोपरि है। प्रगतिवाद ने हिंदी साहित्य को यथार्थ से जोड़कर उसे जनजीवन का दर्पण बनाया । प्रगतिवाद शोषण के विरुद्ध एक समग्र क्रांति का आह्वान था, जिसमें साहित्य केवल भावनात्मक अभिव्यक्ति तक सीमित न होकर उसे सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनाया ।

Keywords: *प्रगतिवाद, समाजवाद, रूढ़िवाद , लोकजीवन, समग्रक्रांति*

Received: 08/01/2026
Accepted: 26/02/2026
Published: 28/02/2026

***Corresponding Author:**
सुजीत कुमार वर्मा
Email: sujeetv771@gmail.com

प्रस्तावना - हिंदी साहित्य का इतिहास विभिन्न साहित्यिक आंदोलनों और धाराओं से समृद्ध रहा है। इनमें प्रगतिवाद एक ऐसी धारा है, जिसने साहित्य को केवल सौंदर्य और कल्पना की सीमाओं से बाहर निकालकर उसे समाज, राजनीति और आर्थिक यथार्थ से जोड़ा। प्रगतिवाद केवल साहित्यिक आंदोलन नहीं था, बल्कि यह एक व्यापक सामाजिक और वैचारिक क्रांति का प्रतीक था। इसने शोषण, असमानता, गरीबी, वर्गभेद और अन्य सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध आवाज उठाई तथा साहित्य को परिवर्तन का माध्यम बनाया।

प्रगतिवाद एक साहित्यिक और सामाजिक आंदोलन है, जो शोषण, असमानता, और अन्याय के विरुद्ध लड़ता है। इसका उद्देश्य समाज में व्यापक परिवर्तन लाना और सभी व्यक्तियों के लिए समानता, न्याय, और स्वतंत्रता प्राप्त कराना है। प्रगतिवाद की भूमिका समाज में जागरूकता फैलाने, सामाजिक परिवर्तन को गति देने, और व्यक्तिगत विकास को बढ़ावा देने में है।

प्रगतिवाद की कई विशेषताएं हैं- जो इसे एक शक्तिशाली आंदोलन बनाती हैं। प्रगतिवाद शोषण के सभी रूपों के विरुद्ध लड़ता है, चाहे वह आर्थिक हो, सामाजिक हो, या राजनीतिक। यह एक समग्र क्रांति की बात करता है, जिसमें समाज के सभी पहलुओं में परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाता है। यह मानवतावाद पर आधारित है, जिसमें मानव की गरिमा और मूल्य को सर्वोपरि माना जाता है। यह सामाजिक न्याय की बात करता है, जिसमें सभी व्यक्तियों के लिए समान अवसर और अधिकार सुनिश्चित किए जाते हैं। इसकी भूमिका समाज में बहुत महत्वपूर्ण है। यह विचारधारा समाज में जागरूकता फैलाती है और लोगों को शोषण के विरुद्ध लड़ने के लिए प्रेरित करती है। प्रगतिवाद सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को गति देता है और समाज को अधिक न्यायपूर्ण और सम्मान बनाने में मदद करता है। यह व्यक्तिगत विकास को भी बढ़ावा देता है और व्यक्तियों को अपने अधिकारों और जिम्मेदारियों के प्रति जागरूक करता है।

प्रगतिवाद के प्रमुख विचारक हुए हैं, जिन्होंने इस आंदोलन को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जिसमें प्रथम नाम काल मार्क्स का आता है। मार्क्स ने शोषण के विरुद्ध लड़ाई की बात की और समाज में वर्गहीन समाज की स्थापना का लक्ष्य रखा। वही, लेनिन ने प्रगतिवाद को एक राजनीतिक आंदोलन के रूप में विकसित किया और समाजवादी क्रांति की बात की। भारत के महान विचारक महात्मा गाँधी ने प्रगतिवाद को एक अहिंसक आंदोलन के रूप में विकसित किया और भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

प्रगतिवाद एक शक्तिशाली आंदोलन है, जो शोषण के विरुद्ध लड़ता है और समाज में व्यापक परिवर्तन लाने का प्रयास करता है। इसकी भूमिका समाज में जागरूकता फैलाने, सामाजिक परिवर्तन को गति देने, और व्यक्तिगत विकास को बढ़ावा देने में है। प्रगतिवाद के प्रमुख विचारकों ने इस आंदोलन को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और इसके सिद्धांतों को विकसित किया है।

पूँजीवादी और समाजवादी (साम्यवादी) के बीच संघर्ष का परिणाम प्रगतिवाद है। मार्क्स की विचारधारा का मूल सिद्धांत द्वंद्वात्मक भौतिकतावाद है, उसके अनुसार सृष्टि के दो प्रधान तत्व हैं- सकारात्मक तथा नकारात्मक। इससे संघर्ष होता है, जिससे चेतना उत्पन्न होती है। चेतना का उत्पन्न होना पदार्थ(Matter) पर निर्भर करता है ।अतः इस द्वंद्व से संबंधित होने से इस भौतिकतावाद को द्वंद्वात्मक भौतिकतावाद कहते हैं। द्वंद्व से ही विकास होता है ।यह विकास ही प्रगति है।1 प्रगतिवाद हिंदी साहित्य का उस काव्यधारा का नाम है, जो मार्क्सवादी दर्शन के आलोक में सामाजिक चेतना व भाव - बोध को अपना लक्ष्य मान कर चली। प्रगतिवाद के उद्भव और विकास में राष्ट्रीय व अंतराष्ट्रीय परिस्थितियां तो सहायक हुई ही साथ में छायावाद की जीवन शून्य हुई व्यक्तिवादी वायवी काव्य धारा की प्रतिक्रिया उसमें समाहित थी।2 एक ओर राजनीतिक-सामाजिक क्षेत्र में अंग्रेजों के द्वारा किया जाने वाला शोषण था तो दूसरी ओर महात्मा गाँधी के अंहिसावादी सिद्धांतों के प्रति असंतोष की लहर थी, जिसमें युवाओं में विद्रोही भावना को अभिव्यक्ति नहीं मिल पा रही थी। एक तरफ जहां अंग्रेजी सरकार दासता, पूँजीवाद व सामंतवाद को बढ़ावा दे रही थी तो दूसरी ओर भयावह गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, शोषण,अकाल व भुखमरी की शिकार सामान्य जनता हो रही है। इन सब विसंगतियों व संकटों को भारतीय बुद्धिजीवी वर्ग देख रहा था। तो दूसरी ओर सन् 1917 में रूसी क्रांति के फल स्वरुप उस समता मूलक समाज को देख रहा था। जहां न कोई शोषण था ,ना ही शोषित । जिसमें सामान्य जनजीवन को महत्ता प्राप्त हो रही थी, जहाँ नए सुख -सुविधाओं की प्रतिष्ठा हो रही थी। रूसी साम्यवादी दर्शन, भारतीय बुद्धजीवियों के लिए प्रेरणा स्रोत बन रहा था। उधर देश की परिस्थितियां विषम होती जा रही थी । उन विषम परिस्थितियों में युवाओं का हृदय असंतोष और विद्रोह से कसमसा रहा था। इस समय देश की तत्कालीन परीस्थितियां प्रगतिवादी के निमित उपयुक्त भूमिका बना रही थी। 'साहित्य समाज का दर्पण है'। साहित्य भी उससे प्रभावित हुआ और प्रगतिशील साहित्य का आंदोलन प्रारंभ हुआ।

सन् 1935 ईस्वी में ई० एम० फार्स्टर के सभापतित्व में पेरिस में "प्रोग्रेसिव राइटर एसोसिएशन" नामक अंतर्राष्ट्रीय संस्था का प्रथम अधिवेशन हुआ। इससे प्रभावित होकर 1936 ईस्वी में सज्जाद जहीर और मुल्कराज आनंद के प्रयत्नों से भारतवर्ष में इस 'प्रगतिशील लेखक संघ' का लखनऊ में प्रथम अधिवेशन हुआ। इसके प्रथम सभापति ' 'मुंशी प्रेमचंद' थे। प्रेमचंद ने अपने अध्यक्षीय अभिभाषण में कहा था," वह(साहित्यकार)देशभक्ति और राजनीति के पीछे चलने वाली सच्चाई ही नहीं बल्कि उसके आगे मशाल दिखाती हुई चलने वाली सच्चाई है"। उनके पश्चात् रवीन्द्रनाथ टैगोर ,जवाहरलाल नेहरू तथा अमृत डांगे जैसे लोग भी इसके सभापति बने।

प्रगतिशील लेखक संघ में प्रगतिवाद शब्द कब घुल आया, निश्चित नहीं कहा जा सकता। प्रेमचंद के अध्यक्षीय भाषण में प्रगतिवाद शब्द का प्रयोग नहीं किया गया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने 'हिंदी साहित्य के इतिहास' में 'प्रगतिवाद' और 'मार्क्सवाद शब्द का उल्लेख नहीं किया है। सन् 1937 में विशाल भारत में 'शिवदान सिंह चौहान' का एक लेख 'भारत में प्रगतिशील साहित्य की 'आवश्यकता' प्रकाशित हुई। जिसमें

मार्क्सवादी सिद्धांतों की चर्चा तो है पर प्रगतिवाद की नहीं। प्रगतिशील लेखक संघ के किसी भी घोषणा पत्र में इसका उल्लेख नहीं किया गया है ।1938 ई०में 'सुमित्रानंदन पंत की 'रूपाभ' पत्रिका का प्रकाशन हुआ । प्रगतिशील विचारधारा का पत्र होते हुए भी इसमें उल्लेख नहीं मिलता। सन 1942 में 'मुक्तिबोध' का प्रगतिवाद एक दृष्टि'में 'आगामी कल' में प्रकाशित हुआ। जिसमें प्रगतिवाद शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग था। परंतु प्रगातिवाद को विदेशी विचारधारा मान लेना अनुचित है, यदि प्रगतिवाद की मां मार्क्सवादी है, तो हिंदी में प्रगतिवाद का जन्म 19वीं शताब्दी में हो जाना चाहिए था। वास्त्विक स्थिति तो यह है कि भारत में इस चेतना का विकास स्वाभाविक रूप से हो रहा था। किसान-मजदूर आंदोलन शुरू हो चुके थे। स्वाधीनता आंदोलन में समझौतावादी और सुधारवादी नेतृत्व से मोह भंग हो रहा था । सन् 1925 में 'भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी' की स्थापना हो चुकी थी। कांग्रेस के भीतर सोशलिस्ट पार्टी का गठन हो चुका था। महात्मा गांधी , विनोबा भावे, जयप्रकाश नारायण, राम मनोहर लोहिया ,आचार्य नरेंद्र देव जैसे नायक सबके सामने उभर कर आ चुके थे। इन सबका विचार साहित्य में कल्पना और भावुकता की जगह यथार्थवाद में परिणति हो रही थी। यदपि प्रगतिवादी काव्य रचना का प्रारंभ निराला के अनेक परवर्ती कविताओं में जैसे - गरम पकौड़ी, झींगुर डटकर बोला, कुकुरमुत्ता, मास्को डायलॉग, वह तोड़ती पत्थर आदि से हो जाती है। लेकिन व्यवस्थित रूप से प्रयोगवादी कवियों के अंतर्गत- नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, त्रिलोचन शास्त्री, शिवमंगल सिंह सुमन, रांगेय राघव ,नरेंद्र शर्मा ,रामविलास शर्मा, शमशेर बहादुर सिंह और रामधारी सिंह 'दिनकर' का नाम लिया जाता है।

प्रगतिवादी कविता सामाजिक यथार्थ परख है। मूलतः वह पूँजीवादी व्यवस्था से उत्पन्न सामाजिक एवं व्यक्तिगत शोषण के विरोध का साहित्य है। शोषक-वर्ग व्यापारी, जमींदार और उद्योगपति की कुरूप सड़ी-गली विसंगति ग्रस्त शक्तियों का पर्दाफाश किया गया है उक्त के सन्दर्भ में रामधारी दिनकर की पंक्तियों मे दृष्टव्य है -

" श्वानों को मिलता दूध वस्त्र भूखे बालक अकुलाते हैं,
मां की हड्डी से चिपक ठिठुर जाड़ो की रात बिताते हैं।
युवती के लज्जा वसन बेंच जब ब्याज चुकाये जाते है,
मालिक जब तेल फूलेलों पर पानी सा द्रव्य बहातें है।
पापी महलों का अहंकार देता मुझको तब आमंत्रण।।

प्रगतिवादी कवि शोषित वर्ग का आह्वान तथा क्रांति में विश्वास करता हैं। वे पूँजीवादी व्यवस्था, रूढ़ियों तथा शोषण के साम्राज्य को समूल नष्ट करने के लिए विद्रोह का स्वर निकलते हैं। बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के कविताओं की कुछ पंक्तियां दृष्टव्य है-

"कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ जिससे उथल-पुथल मच जाये।
एक हिलोर इधर से आए ,एक हिलोर उधर से आए,
प्राणों के लाल पड़ जायें त्राहि -त्राहि रव नभ में छाये ।
नाश और सत्यानाशों का धुआंधार जग में छा जाये"।

बरसे आग जलज जल जायें,भस्मसात भूधर हो जायें" ।

केदारनाथ अग्रवाल जी कहते है -
" मैंने उसको
जब-जब देखा ,
लोहा देखा
लोहे जैसा
तपते देखा
गलते देखा
ढलते देखा
गोली जैसा चलते देखा"।

प्रगतिवादी कवि सामाजिक, आर्थिक, शोषणवादी ,विषमता पर व्यंग्य कसता है । व्यंग्य ऊपर से हास्य लगता है, किंतु अन्ततः वह करुणा के भाव संचार करती है । नागार्जुन कहते है -

घुन खाये शहतीरों पर की
बारहखड़ी विधाता बांचे,
फटी भीत है,छत चूती है,
आले पर बिस्तुइया नाचे।
बरसाकर बेबस बच्चों पर

Copyright: © The authors. This article is open access and licensed under the terms of the Creative Commons Attribution License (http://creativecommons.org/licenses/by/4.0/)

मिनट-मिनट में पांच तमाचे,

इसी तरह से दुखरन मास्टर गढ़ता है आदम के सांचे।

प्रगतिवादी कविताओं में किसानों, मजदूरों, भिखमंगों, विधवाओं, वेश्याओं का जैसा सजीव चित्रण मिलता है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। वह समस्त मानव का उद्धार करना चाहता है। उनके यहां लोक जीवन की पूरी झांकी है, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की कविता 'भिक्षुक' जीवन की त्रासदी का चित्रण कितना हृदय विदारक है-

वह आता-
दो टूक कलेजे के करता, पछताता पथ पर आता।
पेट-पीठ दोनों मिलकर है एक,
चल रहा लकुटिया टेक।
मुट्ठी भर दाने को -भूख मिटाने को,
मुंह फटी पुरानी झोली फैलता-
दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता।

'सुमित्रानंदन पंत' की 'युगवाणी' और 'ग्राम्या,' 'निराला' का 'कुकुरमुत्ता', गरम पकौड़ी, खजोहरा, मंहगू मंहगा रहा आदि रचनाओं में सामाजिक यथार्थ का व्यापक चित्रण मिलता है। नागार्जुन के बलचनमा, नई पौध, बाबा बटेश्वर नाथ, मुंशी प्रेमचंद और भैरव प्रसाद गुप्त, यशपाल आदि की रचनाओं में मजदूर,किसान के लोक जीवन का यथार्थ चित्रण मिलता है। इस संबंध मे नागार्जुन की कविता अकाल और उसके बाद की पंक्तियां दृष्टव्य है।

कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास,
कई दिनों तक कानी कुत्तिया सोई उसके पास।
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त,
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।
दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद,
धुआँ उठा आँगन से ऊपर कई दिनों के बाद।
चमक उठी घर भर की आँखें कई दिनों के बाद,
कौए ने खुजलाई पाँखें कई दिनों के बाद।

नारी के प्रति यथार्थवादी दृष्टिकोण- प्रगतिवादी कवियों ने नारी को पुरुष दासता लौहमयी श्रृंखलाओं से मुक्त कर स्वाधीनता की अधिकारिणी बताया। सुमित्रानंदन पंत ने लिखा-

मुक्त करो नारी को, मानव!
चिर बदिनि नारी को,
युग-युग की बर्बर कारा से
जननि, सखी, प्यारी को! छिन्न करो सब स्वर्ण-पाश
उसके कोमल तन-मन के
वे आभूषण नहीं, दाम
उसके बंदी जीवन के! उसे मानवी का गौरव दे
पूर्ण सत्व दो नूतन,

नारी के प्रति यथार्थवादी दृष्टिकोण के तहत शोषित स्त्रियों के दुखों और संघर्षो का वर्णन मिलता है। जैसे निराला की कविता 'वह तोड़ती पत्थर में

वह तोड़ती पत्थर;
देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर-
वह तोड़ती पत्थर।
कोई न छायादार
पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार,
श्याम तन, भर बँधा यौवन,
नत नयन प्रिय, कर्म-रत मन,
गुरु हथौड़ा हाथ,
करती बार-बार प्रहार :—
सामने तरु-मालिका अट्टालिका, प्राकार।

चढ़ रही थी धूप,
गर्मियों के दिन
दिवा का तमतमाता रूप;
उठी झुलसाती हुई लू,
रुई ज्यों जलती हुई भू,
गर्द चिनगीं छा गई,
प्राय: हुई दुपहर :—
वह तोड़ती पत्थर।

प्रगतिवादी कवि पुरानी परंपराओं और रूढ़ियों को नष्ट करने का आह्वान करता हैं। निराला की कविता 'बादल राग'में 'नष्ट भ्रष्ट हो जीर्ण

पुरातन' पंक्तियों के द्वारा समाज को इससे मुक्त करने की इच्छा व्यक्त करते है। केदारनाथ अग्रवाल की 'युग की गंगा' और त्रिलोचन की रचनाओं में सामाजिक रूढ़ियों को तोड़कर एक आधुनिक, तार्किक समाज की स्थापना का मार्ग प्रशस्त करती है। प्रगतिवादी साहित्यकार ईश्वर को सृष्टि का कर्त्ता न मानकर जागतिक द्वंद्व को सृष्टि के विकास का कारण स्वीकार करता है। उसे ईश्वर की सत्ता ,आत्मा ,परलोक भाग्यवाद, स्वर्ग- नरक आदि पर विश्वास नहीं है । उनकी दृष्टि में मानव का महत्व सर्वोपरि है, उसके लिए 'धर्म एक अफीम का नशा है और प्रारब्ध एक सुंदर प्रवंचना है'। प्रगतिवादी साहित्यकारों के लिए मंदिर, *मस्जिद, गीता, कुरान आदि महत्व नहीं रखता है।*

' किसी को आर्य, अनार्य,
किसी को यवन
किसी को हूण-यहूदी -द्रविड़
किसी को शीश
किसी को चरण
मनुज को मनुज न कहना!

निष्कर्ष- प्रगतिवाद हिंदी साहित्य में एक ऐसी क्रांतिकारी काव्यधारा है, जिसने साहित्य को समाज के निकट लाकर खड़ा कर दिया। यह केवल एक साहित्यिक आंदोलन नहीं, बल्कि एक समग्र क्रांति थी, जिसने समाज में परिवर्तन की चेतना उत्पन्न की। आज भी जब हम सामाजिक असमानता और अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाते हैं, तो प्रगतिवाद की प्रासंगिकता स्पष्ट दिखाई देती है। इस प्रकार, प्रगतिवाद ने हिंदी साहित्य को जनवादी दृष्टिकोण प्रदान किया और उसे सामाजिक बदलाव का सशक्त माध्यम बनाया। प्रगतिवाद ने हिंदी साहित्य को यथार्थ से जोड़कर जनजीवन का दर्पण बनाया । प्रगतिवादी साहित्य ने महलों और कल्पनाओं से निकलकर खेत खलिहानों और मजदूरों की बस्तियों तक अपनी पहुंच बनाई । प्रगतिवादी कवि ने 'कला कला के लिए सिद्धांत को नकारकर 'कला जीवन के लिए है' सिद्धांत को अपनाया। उन्होंने कविता केवल मनोरंजन की वस्तु न मानकर समाज के बदलाव का सशक्त माध्यम बनाया। साहित्य को प्रगतिवादी कविता मार्क्सवादी विचारधारा से प्रेरित होकर सामाजिक विषमता, पूँजीवाद शोषण और सामंतवाद के खिलाफ मुखर हुई। यह शोषित वर्ग के प्रति सहानुभूति ,क्रांति की भावना ,नारी की स्थिति में सुधार, रूढ़ियों का विरोध तथा सामाजिक यथार्थवादी चित्रण के माध्यम से शोषण मूलक प्रवृत्तियों को उजागर करना है तथा जिनका उद्देश्य वर्ग विहीन समाज की स्थापना करना, जिसमें ना कोई शोषक हो न ही शोषित।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1.हिंदी साहित्य का विवेचनपरक इतिहास- डा०मोहन अवस्थी, पृष्ठ संख्या 329 से 331तक

2.हिंदी साहित्य का इतिहास –डॉ नगेन्द्र, पृष्ठ संख्या 622 – 626

3.हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास- रामस्वरूप चतुर्वेदी पृष्ठ संख्या 190

4.हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ बच्चन सिंह, पृष्ठ स० 409 - 410।

Copyright: © The authors. This article is open access and licensed under the terms of the Creative Commons Attribution License (http://creativecommons.org/licenses/by/4.0/)